Impact Factor (SJIF): 6.126 E-ISSN: 2583-1615, P-ISSN: 3049-3498

International Journal of Research in Academic World

Received: 20/June/2025 IJRAW: 2025; 4(8):01-05 Accepted: 24/July/2025

आध्यात्मिक साधना में योग की भूमिका—उपनिषदों के संदर्भ में

*1डॉ. योगेश कुमार और 2डॉ. राघव कुमार

*1, 2सहायक प्राध्यापक, योग विभाग, मैट्स विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ, भारत।

सारांश

उपनिषद भारतीय दर्शन की आत्मा हैं, जहाँ आत्मा (आत्मन) और परमात्मा (ब्रह्मन) के ज्ञान को केंद्र में रखा गया है। उपनिषदों में योग को केवल शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि आत्मज्ञान और मोक्ष प्राप्ति का एक साधन माना गया है। इस शोध में यह विश्लेषण किया जाएगा कि उपनिषद योग को किस प्रकार आध्यात्मिक साधना का माध्यम मानते हैं। योग भारत की प्राचीनतम और सर्वश्रेष्ठ जीवन—पद्धतियों में से एक है। यह केवल एक शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि शरीर, मन और आत्मा के समन्वय का मार्ग है। योग का उद्देश्य है— व्यक्ति को अपने वास्तविक स्वरूप (आत्मा) से परिचित कराना और परम शांति की प्राप्ति कराना। आज के भागदौड़ और तनावपूर्ण जीवन में योग की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो गई है। उपनिषद योग को केवल एक साधना नहीं बल्कि मोक्ष (कैवल्य) का मार्ग मानते हैं। यह योग न केवल शरीर और मन की एकता है, बल्कि आत्मा और परमात्मा की एकता की खोज है। उपनिषदों में वर्णित योग की अवधारणा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, विशेषकर उन लोगों के लिए जो केवल शारीरिक योग तक सीमित नहीं रहकर आध्यात्मिक उन्नति चाहते हैं। उपनिषद वेदांत का सार हैं —आत्मा और ब्रह्म के ज्ञान के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति इनका मुख्य उद्देश्य है। इसमें बताई गई आध्यात्मिक साधनाएँ आत्म—ज्ञान और मोक्ष प्राप्ति का मार्ग हैं।

मुख्य शब्दः आध्यात्मिक साधना, आत्मा, योग, उपनिषद, मोक्ष।

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन का एक अनमोल रत्न हैं उपनिषद, जिन्हें वेदांत का सार भी कहा जाता है। उपनिषदों में जीवन के गूढ़तम प्रश्नों के उत्तर निहित हैं, आत्मा का स्वरूप, ब्रह्म की सच्चाई, जगत का रहस्य और मोक्ष की प्राप्ति। ये ग्रंथ आध्यात्मिक ज्ञान के शिखर हैं, जहाँ योग को शरीर, मन और आत्मा के समन्वय का माध्यम बताया गया है। योग उपनिषदों में केवल शारीरिक क्रिया नहीं, बल्कि एक संपूर्ण साधना है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूपका बोध करता है और परम शांति की प्राप्ति करता है। [1] उपनिषद वेदों का अंतिम भाग हैं और इन्हें वेदांत भी कहा जाता है। संस्कृत में 'उपनिषद' का अर्थ होता है 'निकट बैठना', अर्थात् गुरु के निकट बैठकर वेदांत के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करना। ये ग्रंथ प्राचीन काल के वेदों की धार्मिक, दार्शनिक, और आध्यात्मिक व्याख्या हैं। उपनिषदों की संख्या लगभग 108 मानी जाती है, जिनमें से प्रमुख हैं, ईशावास्य, कठ, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, और मुण्डक उपनिषद। ये ग्रंथ ब्रह्मन् (परम वास्तविकता) और आत्मन् (व्यक्तिगत आत्मा) के ज्ञान पर केन्द्रित हैं। संस्कृत शब्द "योग" का मूल "युज" है, जिसका अर्थ है 'जोड़ना' या 'एकता। योग का उद्देश्य है— शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा को एकसूत्र में बाँधकर एकीकृत करना। उपनिषदों में योग शारीरिक क्रिया से बढ़कर है, यह मन के विकारों को शमित करने, चित्त को स्थिर करने और आत्मा के साक्षात्कार का साधन है। उपनिषदों में योग को आत्मा और ब्रह्म के मिलन का माध्यम माना गया है। यह साधना व्यक्ति को जन्म—मरण के चक्र से मुक्त कर मोक्ष प्रदान करती है। योग की इस परिभाषा में शारीरिक योगासन से अधिक, प्राणायाम, ध्यान, समाधि, और आत्मा की गहन अनुभूति सम्मिलित हैं। [2] मोक्ष का अर्थ है जन्म—मरण के बंधन से मुक्ति। उपनिषदों में योग के द्वारा साधक अपने कर्मों के फल से ऊपर उठकर, चित्त की स्थिरता से, और ज्ञान की प्राप्ति से इस मोक्ष को प्राप्त करता है। योग साधना मन के विकारों

*Corresponding Author: डॉ. योगेश कुमार

(क्लेश) को समाप्त कर चित्त को निर्मल करती है। जब चित्त पूर्णतया शुद्ध और एकाग्र हो जाता है, तब आत्मा और ब्रह्म का अनुभव होता है, जिसे मोक्ष या कैवल्य कहा जाता है। आधुनिक जीवन के तनाव, चिंता और अवसाद के समय में योग मानसिक स्थिरता और स्वास्थ्य प्रदान करता है। उपनिषदों में बताई गई प्राणायाम और ध्यान की विधियाँ आज भी तनाव निवारण में कारगर सिद्ध हो रही हैं। योगासन शारीरिक रोगों को दूर करने और शरीर को स्वस्थ रखने में मदद करते हैं। हृदय रोग, मधुमेह, उच्च रक्तचाप आदि में योग के लाभ वैज्ञानिक दृष्टि से भी प्रमाणित हैं। [3] योग साधना आधुनिक मनुष्य को केवल शारीरिक और मानसिक स्तर पर नहीं, बल्कि आध्यात्मिक उन्नति की ओर भी ले जाती है।

पतंजलि योगसूत्रों ने योग को आठ अंगों (अष्टांग योग) में विस्तृत किया है, जो उपनिषदों के योग तत्त्वों का विस्तार है। उपनिषदों में जहां योग आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति के रूपमें देखा गया, वहीं पतंजलि ने इसे व्यवस्थित प्रक्रिया के रूपमें प्रतिपादित किया। भगवद्गीता में भी योग की व्यापक चर्चा है, विशेषकर कर्मयोग, भक्तियोग, और ज्ञानयोग। ये योग के विभिन्न आयाम हैं जो उपनिषदों की शिक्षाओं से प्रेरित हैं। उपनिषद भारतीय दर्शन की आत्मा हैं, जिनमें योग को केवल शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना का उच्चतम मार्ग माना गया है। योग की उपनिषदों में दी गई अवधारणा शरीर, मन और आत्मा के समन्वय, चित्त की स्थिरता, और आत्मा तथा ब्रह्म के मिलन की प्रक्रिया है। योग से न केवल शारीरिक स्वास्थ्य मिलता है, बल्कि मनोवैज्ञानिक शांति और आत्मिक उन्नति भी होती है। आज की आधुनिक दुनिया में उपनिषदों के योग का महत्व और भी बढ़ गया है क्योंकि यह मनुष्य को तनावमुक्त, स्वस्थ और आध्यात्मिक से प्रबुद्ध जीवन की ओर ले जाता है। [4] इस प्रकार उपनिषदों में योग की भूमिका संपूर्ण मानव जीवन के उत्थान और मोक्ष की प्राप्ति के लिए अनिवार्य है। योग का उद्देश्य केवल शरीर को स्वस्थ बनाना नहीं, बल्कि व्यक्ति के चारित्रिक और आध्यात्मिक विकास की ओर भी है। योग के दो मुख्य आधार– यम और नियम, व्यक्ति को नैतिक जीवन जीने की शिक्षा देते हैं। इसके माध्यम से आत्म–नियंत्रण, संयम, और विवेक की भावना विकसित होती है।

योगासन और प्राणायाम शरीर को लचीला, मजबूत और रोग–मुक्त बनाते हैं। नियमित योगाभ्यास से हृदय, फेफड़े, पाचनतंत्र और स्नायु–तंत्र मजबूत होते हैं। यह जीवनशैली संबंधी रोगों जैसे मधुमेह, मोटापा, और रक्तचाप में भी लाभदायक है। [5] योग न केवल आत्मिक विकास का मार्ग है, बल्कि यह मानसिक स्थिरता, शारीरिक स्वास्थ्य और नैतिक बल को भी बढ़ाता है। आज के युग में योग का व्यापक प्रचार–प्रसार हुआ है, परंतु उसका मूल आध्यात्मिक पक्ष उपेक्षित रह गया है। उपनिषदों में वर्णित योग का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि योग आत्मा को परमात्मा से जोड़ने का मार्ग है। यह शोध आधुनिक योग को उसकी मूल जड़ों से जोड़ने का प्रयास है।

उपनिषदों में आध्यात्मिक साधना

1. श्रवण, मनन, निदिध्यासन (श्रवण = सुनना, मनन = विचार करना, निदिध्यासन = ध्यान करना)

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम। [6]

उस ब्रह्मविद्या (परम सत्य) की प्राप्ति के लिए शिष्य को समिधा (यज्ञ की लकड़ियाँ) हाथ में लेकर उस गुरु के पास जाना चाहिए जो शास्त्रों का ज्ञाता हो (श्रोत्रिय) और स्वयं ब्रह्म में स्थित हो (ब्रह्मनिष्ठ)।

यह श्लोक गुरु–शिष्य परंपरा की गहराई, महत्व और गंभीरता को दर्शाता है। उपनिषद का यह संदेश अत्यंत स्पष्ट है, ब्रह्मज्ञान या आत्मसाक्षात्कार किसी अकेले प्रयास या किताब पढ़ने से नहीं होता, बल्कि योग्य गुरु के सान्निध्य में ही संभव है।

ज्ञान का आधार केवल तर्क या पठन नहीं, बल्कि सच्चे गुरु का सान्निध्य है। गुरु केवल शिक्षक नहीं, बल्कि वह दर्पण है जिसमें शिष्य अपने स्वरूप (आत्मा) को पहचानता है। यह ब्रह्मज्ञान गुरु के मार्गदर्शन और कृपा से ही जागृत होता है।

2. आत्म–विचार और आत्मबोध

तत्त्वमसि श्वेतकेतो। [7]

अर्थः तू वही है, हे श्वेतकेतु! आत्मा और ब्रह्म की एकता की शिक्षा।

साधना का मर्मः आत्मा और परमात्मा एक हैं– इसका अनुभव ही मोक्ष है। तत्त्वमसि" उपनिषदों के महावाक्यों (महान वाक्यों) में से एक है, जो अद्वैत वेदांत का मूलमंत्र है। इसका अर्थ है–स्वयं में ब्रह्म का अनुभव हम स्वयं जो हैं, वह केवल शरीर, मन या बुद्धि नहीं, बल्कि परम तत्व (ब्रह्म) हैं। अहं ब्रह्मास्मि का समानार्थी यह कथन मैं वही हूँ की पुष्टि करता है, जहाँ आत्मा (आत्म) और परमात्मा (ब्रह्म) का एक–पता का ज्ञान होता है। आत्मा और ब्रह्म की एकता हमारे अंदर जो शुद्ध चेतना है, वह ब्रह्म की चेतना है। कोई भेद नहीं। माया और भेद भाव का अन्त इस ज्ञान से भ्रम का अंत होता है और आत्मा की परम सत्ता के साथ एकत्व की अनुभूति होती है। स्वरूप की पहचान व्यक्ति को अपने भीतर छुपी परम सत्य की पहचान करनी चाहिए। असली स्वरूपका बोध हमें अपने अंदर गहराई से आत्म–निरीक्षण करके अपनी असली पहचान (आत्माध्ब्रह्म) को समझना चाहिए। मुक्ति का माग–"तत्त्वमसि" का ज्ञान ही मोक्ष का मार्ग है, जहाँ व्यक्ति संसार के बंधनों से मुक्त हो जाता है।

3. वैराग्य और आत्म–शुद्धि

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः। [8]

अर्थः आत्मा केवल वाणी, बुद्धि या बहुत पढ़ने से प्राप्त

नहीं होता, केवल उसी को प्राप्त होता है, जिसे आत्मा स्वयं स्वीकार करता है।

साधना का मर्म: विनम्रता, पवित्रता और ईश्वर की कृपा अनिवार्य है। आत्मा ज्ञान की सीमा, आत्मा का ज्ञान किसी बाहरी साधन या ज्ञान–स्रोत (जैसे प्रवचन, बौद्धिक अध्ययन, पुस्तकों की मात्रा) से नहीं मिलता। यह बाहरी साधनों से सीमित नहीं। स्वीकार्यता का महत्व जो व्यक्ति आत्मा के लिए सचमुच तत्पर, विनम्र और सच्चा है, केवल वही इस ज्ञान को पा सकता है। आत्मा की अनिवार्यता आत्मा की अनुभूति एवं शुद्धि के लिए मन, हृदय और चेतना की स्वीकृति जरूरी है। यह एक सहज, अंतर्निहित स्वीकार्यता है विनम्रता– अहंकार और अभिमान से मुक्त होकर सच्चे मन से ज्ञान ग्रहण करने का भाव। आत्मिक शुद्धि, मन, वचन और कर्मों की पवित्रता, जो आत्मा के प्रकाश को ग्रहण करने के लिए आवश्यक है। ईश्वर की कृपा, केवल अपनी बुद्धि या प्रयास से नहीं, बल्कि ईश्वरीय अनुग्रह से ही आत्मज्ञान संभव है। ज्ञान केवल बौद्धिक स्तर पर नहीं, बल्कि हृदय और आत्मा के स्तर पर स्वीकार करने से प्राप्त होता है। सत्संग, अध्ययन, और तपस्या के साथ–साथ आत्मा की स्वीकृति और ईश्वर की कृपा भी अनिवार्य है। शुद्धता और समर्पण के बिना आत्मा का सच्चा ज्ञान संभव नहीं।

4. इन्द्रिय और मन का संयम

आत्मानं रथिनं विद्धि, [9]

अर्थ: आत्मा रथ का स्वामी है, शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है और मन लगाम है।

साधना का मर्म: इन्द्रियों और मन का संयम आध्यात्मिक प्रगति के लिए आवश्यक है।

आत्मा वह शाश्वत चेतना है जो हमारे शरीर और मन को नियंत्रित करती है। जैसे रथ का स्वामी अपने रथ को अपनी इच्छा से कहीं भी ले जाता है, वैसे ही आत्मा शरीर और मन को अपनी इच्छा, निर्णय और चेतना के अनुसार नियंत्रित करती है। आत्मा ही जीवन की सच्ची पहचान है, जो शारीरिक और मानसिक अनुभवों से परे है। शरीर को रथ के रूप में देखा गया है, जो आत्मा को इस संसार में यात्रा करने का माध्यम प्रदान करता है। शरीर बिना आत्मा के निष्प्राण है, जैसे रथ बिना स्वामी के चलता नहीं। यह शरीर विभिन्न इंद्रियों और अंगों का समूह है, जो आत्मा की यात्रा का वाहन है। बुद्धि रथ की सारथी है, जो रथ को सही दिशा में चलाती है। बुद्धि हमारे विवेक, समझ और निर्णय क्षमता को दर्शाती है। यह तय करती है कि हम किस मार्ग पर चलें, कौन से विकल्प चुनें। बुद्धि के बिना शरीर और मन भ्रमित हो जाते हैं, और जीवन अनियंत्रित हो जाता है। मन को रथ की लगाम के रूपमें बताया गया है। जैसे रथ की लगाम हाथी या घोड़े को नियंत्रित करती है, वैसे ही मन हमारी इच्छाओं, भावनाओं और संवेगों को नियंत्रित करता है। मन के नियंत्रण में ही हमारा व्यवहार, प्रतिक्रियाएं और सोच होती हैं। जब मन स्थिर और संयमित होता है, तब जीवन में शांति और संतुलन आता है। यह उपमा जीवन के विभिन्न पहलुओं को समन्वित रूपसे समझाने में मदद करती है। यह बताती है कि हमारा जीवन एक यात्रा है, जिसमें आत्मा को नियंत्रित करने के लिए बुद्धि और मन का उचित संतुलन आवश्यक है। यदि मन और बुद्धि नियंत्रण में न हों, तो रथ (शरीर) अनियंत्रित हो जाता है, जिससे जीवन में संकट और भ्रम पैदा होता है। आज के तनावपूर्ण जीवन में यह उपमा अत्यंत महत्वपूर्ण है। मन की अनियंत्रित इच्छाएं और भ्रमित बुद्धि जीवन को अस्त–व्यस्त कर देती हैं। इसलिए, हमें अपने मन को संयमित करना चाहिए और बुद्धि की मदद से सही दिशा में कदम बढ़ाने चाहिए, जिससे आत्मा की सच्ची यात्रा सफल हो सके।

5. ॐ का ध्यान (प्रणव उपासना)

ॐ इत्येतदक्षरं इदं सर्वम् [10]

अर्थ: ॐ ही समस्त जगत का सार है– अतीत, वर्तमान और भविष्य।

साधना का मर्म: ॐ का ध्यान ब्रह्म की अनुभूति का सशक्त साधन है। ॐ" न कोई सामान्य ध्वनि है और न ही कोई शब्दमात्र। यह उस एकमात्र सत्ता, ब्रह्म का प्रतीक है, जो इस जगत का कारण, आधार और स्व है। माण्डूक्य उपनिषद् कहता है कि यह एक अक्षर "ॐ" ही समस्त सृष्टि का प्रतिपादन करता है। इसका उच्चारण करते समय जो ध्वनि उत्पन्न होती है, वह ब्रह्मांड की मूल कंपन का प्रतिनिधित्व करती है। ॐ तीन ध्वनियों से मिलकर बना है– अ, उ, म।

- **अ (अकार): जाग्रत अवस्था:** जिसमें हम बाह्य जगत का अनुभव करते हैं।
- **उ (उकार): स्वप्न अवस्था:** जो अंतर्मन में चलती है, कल्पनाओं व स्मृतियों से जुड़ी।
- **म (मकार): सुषुप्ति अवस्था:** गहरी नींद, जिसमें आत्मा अज्ञानावस्था में लीन रहती है।

इन तीनों ध्वनियों से आगे चतुर्थ (तुरीय) अवस्था आती है, जो शुद्ध चेतना है, जहाँ द्वैत नहीं होता। यह अवस्था ॐ के मौन भाग से जुड़ी है। माण्डूक्य उपनिषद् कहता है कि "ॐ" केवल वर्तमान का ही नहीं, अपितु अतीत और भविष्य का भी प्रतिनिधित्व करता है। इसका तात्पर्य यह है कि यह ध्वनि कालातीत है समय के हर क्षण में व्याप्त है। यह ब्रह्म का प्रत्यक्ष है, जो नित्य, निराकार और सर्वव्यापी है। ध्यान व साधना में उपयोग– ध्यान के अभ्यास में ॐ का उच्चारण व्यक्ति को मानसिक शांति, एकाग्रता और आत्मिक बल प्रदान करता है। चिन्तन का माध्यम– यह शब्द आत्मनिरीक्षण और आत्मबोध के द्वार खोलता है। सांसारिकता से ऊपर उठने की सीढ़ी– जब मनुष्य ॐ के अर्थ को समझ लेता है, तो वह जान लेता है कि वह केवल शरीर या मन नहीं, अपितु स्वयं ब्रह्म का अंश है।

6. विवेक और वैराग्य

तं तु तस्य तदात्मानं विदित्वा मुनिर्न शोचति। [11]

अर्थः जो आत्मा को जान लेता है, वह कभी शोक नहीं करता।

साधना का मर्मः विवेक (वास्तविक और असत्य का भेद) और वैराग्य से आत्मज्ञान प्राप्त होता है। विवेक का शाब्दिक अर्थ है, विचार करने की शक्ति या सत–असत् का भेद करने की क्षमता। यह वह आंतरिक प्रकाश है जो हमें यह समझने में मदद करता है कि इस संसार में क्या स्थायी है और क्या अस्थायी। विवेक वाला व्यक्ति जानता है कि शरीर नश्वर है, आत्मा अमर है। सुख, दुख क्षणिक हैं, आत्मा साक्षी है। संसार माया है, आत्मा ही सत्य है। विवेक साधक को भ्रम से निकालकर आत्मसत्ता की ओर ले जाता है। यह मन में उठने वाले मोह, लोभ, और कामनाओं को परखता है और उनके पीछे छिपे सत्य को उजागर करता है। वैराग्य का अर्थ है, विकल्पों में आसक्ति का अभाव। [12] इसका तात्पर्य यह नहीं कि व्यक्ति संसार को त्याग दे, बल्कि यह कि वह संसार में रहते हुए भी उससे गहरे रूप में जुड़ा नहीं होता। वैराग्य दो प्रकार का होता है–

1. स्मृत वैराग्य, जब किसी क्षणिक दुःख या मोह से व्यक्ति क्षणिक रूप से उदासीन हो जाता है।
2. विवेकज वैराग्य, जब स्थायी विवेक से व्यक्ति जान लेता है कि संसार में कुछ भी शाश्वत नहीं है।

वैराग्य वह आंतरिक शक्ति है जो मन को विषयों से हटाकर आत्मा की ओर केंद्रित करती है। उपनिषदों में इसे आत्मज्ञान प्राप्त करने की अनिवार्य शर्त माना गया है। जो आत्मा को जान लेता है, वह शोक नहीं करता। इसका तात्पर्य है कि जब साधक आत्मा के स्वरूप को, जो अजर, अमर, नित्य और निर्लिप्त है, जान लेता है, तब उसे किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति से दुःख नहीं होता। क्योंकि तब वह जान चुका होता है कि, वह शरीर नहीं है, आत्मा है। मृत्यु अंत नहीं है, आत्मा की यात्रा का एक पड़ाव मात्र है। प्रेम, दुःख, हानि, लाभ, सब क्षणिक हैंय आत्मा साक्षी है। इस ज्ञान के बाद साधक मुक्ति (मोक्ष) की ओर बढ़ता है। विवेक और वैराग्य आत्मज्ञान की दो पगडंडियाँ हैं। जो व्यक्ति केवल शास्त्र पढ़ता है लेकिन उसका विवेक जागृत नहीं होता, वह ज्ञान को केवल सूचना के रूप में रखता है और जो वैराग्य के बिना साधना करता है, उसका मन बार–बार विषयों की ओर भटकता है।

निष्कर्ष

उपनिषद् भारतीय आध्यात्मिक परंपरा का मूल और वेदांत का सार हैं, जहाँ आत्मा (आत्म्) और परमात्मा (ब्रह्मन) के ज्ञान को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। उपनिषदों में योग को केवल शारीरिक क्रिया नहीं, बल्कि आत्म, साक्षात्कार और मोक्ष की प्राप्ति का साधन माना गया है। योग, जैसा कि उपनिषदों में वर्णित है, शरीर, मन और आत्मा, इन तीनों का संतुलित समन्वय है, जो साधक को उसकी वास्तविक प्रकृति से परिचित कराता है। आज के तनावपूर्ण और भौतिकता प्रधान जीवन में, उपनिषदों में वर्णित योग की आध्यात्मिक परिभाषा अधिक प्रासंगिक हो गई है। यह केवल स्वास्थ्य या फिटनेस तक सीमित नहीं, बल्कि आंतरिक शांति, स्थिरता और ब्रह्मज्ञान की ओर ले जाने वाला पथ है। उपनिषद योग को आत्मा और परमात्मा की एकता की खोज मानते हैं, जिससे मनुष्य जीवन के अंतिम लक्ष्य, मोक्ष, की प्राप्ति कर सकता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में योग की अवधारणा न केवल एक प्राचीन वैदिक सिद्धांत है, बल्कि एक शाश्वत मार्गदर्शन भी है, जो आज के युग में भी आत्मिक उन्नति के इच्छुक साधकों के लिए अमूल्य है। अतः योग का वास्तविक स्वरूप उपनिषदों की दृष्टि से समझना, उसे केवल व्यायाम या आसनों तक सीमित न रखकर, एक गहन आध्यात्मिक साधना के रूप में अपनाना ही सच्चा योग है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सेली, हंस. 'आध्यात्मिक दृष्टिकोण,' तनाव एवं कार्य तनाव को समझने एवं प्रबंधन संबंध दृष्टिकोन (2017), 267.
2. रॉय, जयश्री. 'योग आत्म–साक्षात्कार की वास्तविक रूपरेखा है' सनातनोदय (2025), 521–531.
3. ओकोंटा, नकेची रोज, 'क्या योग चिकित्सा उच्च रक्तचाप वाले रोगियों में रक्तचाप को कम करती है?' एक एकीकृत समीक्षा, 'होलिस्टिक नर्सिंग प्रैक्टिस. 2012; 26(3):137-141.
4. फ्रॉली, डेविड, रमण महर्षि का आत्म–साक्षात्कार का सार, वैदिक विजडम प्रेस, 2018।
5. सिंह, पंकज, एट अल, योग का विज्ञान, बुक सागा प्रकाशन, 2024.
6. मुण्डक उपनिषद 1.2.12
7. छान्दोग्य उपनिषद–6.8.7
8. कठ उपनिषद–1.2.24
9. कठ उपनिषद् 1.3.3–4
10. माण्डूक्य उपनिषद 1.1
11. बृहदारण्यक उपनिषद् 4.4.7
12. माल्ट्ज, माइकल डी. रिसिडिविज्म. माइकल माल्ट्ज, 1984.
13. आचार्य प्रद्युम्न. साधना पथ. द्वितीय सं, पतंजलि योगपीठ हरिद्वार,
14. आचार्य बालकृष्ण, विचार, क्रांति, पंचम संस्कण, पतंजलि योगपीठ, 2019.
15. आर्य डॉक्टर सोमवीरसलोनी प्रो. धर्मवीर. योगियों का जीवन परिचय. प्रथम संर; राघव पब्लिकेशन न्यू दिल्ली, 2021.
16. जयदयालजी गोयनंदक ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्री. मासिक पत्रिका कल्याण. गीता प्रेस गोरखपुर, 2020
17. द्विवेदी, मुकंदसंपादित. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली. क्र.6 नई दिल्ली–लोकभारती प्रकाशन, 2013

18. पाण्डेयडॉ. राजकुमारी. भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम. राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2008
19. बालकृष्णाआचार्य. योग, विज्ञानम (योग के गुढ़ रहस्यो का दार्शनिक व वैज्ञानिक विवेचन). दिव्य प्रकाशन पतंजलि योगपीठ महषि दयानन्द ग्राम दिल्ली, हरिद्वार राजमार्ग, बहादराबाद, हरिद्वार.
20. मनोज. ज्ञान प्रवाह (स्वामी अवधेशानंद जी गिरी). पब्लिकेशन बुराड़ी दिल्ली, 2017.
21. मिश्रनारायण डॉ० ह्दय. भारतीय दर्शन (ज्ञान मीमांसा एवम् तत्व मीमांसा). द्वारका प्रसाद अग्रवाल शेखर प्रकाशन 101 चक, जीरो रोड इलाहाबाद, 2004.
22. लहरीएम. "छत्तीसगढ़ दर्पण दर्शनशास्त्र भारतीय दर्शन एवं योग." दर्शनशास्त्र, 2017 पेज न.192.
23. विज्ञानानंदसरस्वती स्वामी, योग विज्ञान. द्वितीय सं, योग निकेतन ट्रस्ट मुनि की रेती ऋषिकेश उत्तराखंड, 2007.
24. शंकरनारायण, मोक्ष के मार्ग वैदिक परंपरा के अनुसार, 2016.
25. सेली, हंस. 'आध्यात्मिक दृष्टिकोण,' तनाव एवं कार्य तनाव को समझने एवं प्रबंधन संबंध दृष्टिकोन (2017), 267.
26. रॉय, जयश्री. 'योग आत्म–साक्षात्कार की वास्तविक रूपरेखा है' सनातनोदय (2025), 521–531.
27. फ्रॉली, डेविड, रमण महर्षि का आत्म–साक्षात्कार का सार, वैदिक विजडम प्रेस, 2018.
28. सिंह, पंकज, एट अल, योग का विज्ञान, बुक सागा प्रकाशन, 2024.
29. माल्ट्ज, माइकल डी. रिसिडिविज्म. माइकल माल्ट्ज, 1984.